स्वदेशी आंदोलन का भारतीय समाज पर प्रभाव : एक विश्लेषण

डॉ. राकेश रंजन सिन्हा

एसोशिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष,
इतिहास विभाग, कुवंर सिंह महाविद्यालय, लहेरियासराय, दरभंगा।

स्वदेशी आंदोलन की जड़े बंगाल विभाजन विरोधी आंदोलन में थी, जो लॉर्ड कर्जन के बंगाल प्रांत को विभाजित करने के फैसले का विरोध करने के लिए 1905 ई0 में शूरू किया गया था। बंगाल में अन्यायपूर्ण विभाजन को लागू होने से रोकने हेतु सरकार पर दवाब बनाने के लिए नरमपंथियों द्वारा विभाजन विरोधी अभियान को शूरू किया गया था। सरकार को लिखित में याचिकाए दी गई, जनसभाओं का आयोजन किया गया तथा हितवादी संजीवनी और बंगाली जैसे समाचार–पत्रों के माध्यम से विचारों का प्रचार–प्रसार किया गया। विभाजन के कारण बंगाल में विभाजन विरोधी सभाओं का आयोजन किया गया, जिसके तहत् सबसे पहले विदेशी वस्तुओं के वहिष्कार का संकल्प लिया गया। अगस्त 1905 ई0 में कलकत्ता के टाउनहॉल में एक विशाल बैठक आयोजित की गई, जिसमें स्वदेशी आंदोलन की औपचारिक घोषणा की गई।

इस आंदोलन का भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन एवं समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा। आंदोलन के परिणामस्वरूप वर्ष 1905–1908 के दौरान विदेशी आयात में उल्लखनीय गिरावट आई। आंदोलन के परिणामस्वरूप युवाओं में उग्रवादी आंदोलन का विकास हुआ। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप युवाओं में चरम राष्ट्रवाद का विकास हुआ, जो हिंसा के माध्यम से ब्रिटिश प्रभुत्व को तुरंत समाप्त करना चाहता था। वर्ष 1909 ई0 में मार्ले मिन्टों सुधार के रूप में ब्रिटिश शासन को भारतीयों को कुछ रियायते देने हेतु मजबूर किया गया।

स्वदेशी आंदोलन का एक अन्य दूसरा सबसे बड़ा प्रभाव यह था कि इसने भारतीय समाज में 'आत्म निर्भरता' एवं आत्मशक्ति की भावना जागृत की। आंदोलनकारी नेताओं का मानना था कि सरकार के खिलाफ संधर्ष चलाने के लिए जनता में स्वालम्बन की भावना भरना बहुत जरूरी है। स्वालम्बन और आत्म निर्भरता का प्रश्न राष्ट्रीय स्वाभिमान, आदर और आत्म विश्वास के साथ जुड़ा हुआ था।

गाँवों के आर्थिक एवं सामाजिक पुनरूत्थान के लिए गाँवों में रचनात्मक कार्य शुरू करने की जरूरत महसूस कि गई। रचनात्मक कार्यो में सामाजिक सुधार जैसे जाति प्रभुत्व, बाल–विवाह, दहेज–प्रथा तथा शराबखोरी जैसी सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ लड़ाई छेड़ना शामिल था।

आत्म निर्भरता के लिए स्वदेशी एवं राष्ट्रीय शिक्षा कि जरूरत बड़ी शिद्दत के साथ महसूस की गई। टैगोर के शांतिनिकेतन की तर्ज पर बंगाल नेशनल कॉलेज की स्थापना की गई, जिसके प्राचार्य अरविन्द घोष बने। बहुत थोड़े समय में ही पूरे देश में अनेक राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना हो गई। अगस्त 1906 ई0 में राष्ट्रीय शिक्षा परिषद् का गठन हुआ। इसमें उस समय देश के सारे जाने–माने लोग शामिल थे। परिषद् का उद्देश्य था राष्ट्रीय नियंत्रण के तहत जनता को इस तरह का साहित्यिक, वैज्ञानिक और तकनीकि शिक्षा देना, जो राष्ट्रीय जीवन–धार से जुड़ी हो तकनीकि शिक्षा के लिए बंगाल इंस्टीट्यूट की स्थापना की गई। चंदा इक्ट्ठा कर कोष बनाया गया, जिससे छात्रों को ऊँची शिक्षा के लिए जापान भेजा जा सके। शिक्षा का माध्यम वे देशी भाषाएँ बनी, जो क्षेत्र विशेष में प्रचलित थी। उद्देश्य था की शिक्षा घर–घर पहुँचे।

आत्म निर्भरता के लिए स्वदेशी उद्योगों की जरूरत महसूस की गई। लगभग इसी समय पुरे देश में तमाम स्वदेशी कल–कारखाने स्थापित होने लगे। कपड़ा मीले, साबुन, माचिस के कारखाने, चर्म उद्योग, बैंक एवं बीमा कंपनियाँ अस्तित्व में आई। हालाकि इनमें से अधिकतर चल नही पाई, क्योंकि इनके मालिक व्यापारिक चतुराई और जोड़–तोड़ नही जानते थे। उन्होंने तो महज देश भक्ति के नाते स्वालम्बन के उद्देश्य से इन कारखानों की स्थापना की थी। कुछ कारखाने अवश्य जिंदा रह पाये और अच्छा काम किया, जैसे डॉ0 बी.सी.राय की बंगाल केमिकल्स फैक्ट्री।

सांस्कृतिक जीवन पर प्रभावः–

स्वदेशी आंदोलन का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा सांस्कृतिक क्षेत्र में पड़ा। बंगला साहित्य, विशेषकर काव्य के लिए तो यह स्वर्णकाल था। रवींद्रनाथ टैगोर, रजनीकांत सेन, द्विजेंद्रलाल राय, मुकुंद दास, सैयद अबू मुहम्मद इत्यादि के उस समय के लिखे गीत, क्रांतिकारी आतंकवादियों, नरमपंथियों, गाँधीवादियों और साम्यवादियों सबके लिए प्रेरणास्त्रोत बने और आज भी ये गीत उतने ही लोकप्रिय हैं। टैगोर ने उस समय 'बांग्लादेश' के स्वाधीनता संघर्ष को और तेज करने के लिए प्रेरणास्त्रोत जो गीत लिखा था 'अमार सोनार बाँगला' वह 1971 में बाँग्लादेश का राष्ट्रगान बना। ग्रामीण हिंदूओं और मुसलमानों के बीच उस समय लोकप्रिय बँगला लोक संगीत पर स्वदेशी आंदोलन की गहरी छाप पड़ी। तमाम

लोकगाथाएँ लिखी गई, दक्षिणारजन मित्र मजूमदार की लिखी हूई ठाकुरमार झूली आज भी बंगाली बच्चों को आह्लादित करती हैं।

कला क्षेत्र में यहीं वह समय था, जब रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भारतीय कला पर पश्चात्य अधिपत्य को तोड़ा और मुगलों, राजपूतों की समृद्ध स्वदेशी पारंपरिक कलाओं व अजंता की चित्रकला से प्रेरणा लेनी शुरू की। 1906 में स्थापित इंडियन सोसाइटी ऑफ ओरिएंटल आट्र्स की पहली छात्रवृति भारतीय कला के मर्मज्ञ नंदलाल बोस को मिली। विज्ञान के क्षेत्र में जगदीशचंद्र बोस प्रफुल्लचन्द्र राय इत्यादि की उल्लेखनीय सफलताएँ एवं आविष्कार, स्वदेशी आंदोलन को और भी मजबूत बनाने लगे।

बहुआयामी कार्यक्रमों और गतिविधियों वाले इस स्वदेशी आंदोलन ने पहली बार समाज के एक बहुत बड़े तबके को अपने दायरे में लिया। जनता का एक बहुत बड़ा हिस्सा पहली बार सक्रिय राष्ट्रवादी राजनीति में भागीदार बना। राष्ट्रीय आंदोलन का सामाजिक दायरा काफी फैला और इससे कुछ जमींदार शहरी निम्न मध्यमर्व के लोग तथा छात्र शरीक हुए, पहली बार औरतें घर से बाहर निकली, प्रदर्शन में हिस्सा लेने लगीं, धरने पर बैठने लगी। यह वह समय था, जब पहली बार मजदूर वर्ग की आर्थिक कठिनाईयों को राजनीतिक स्तर पर उठाया गया था। उसे राजनीतिक संधर्ष से जोड़ा गया। आंदोलनकारी नेता, जिनमें कुछ तत्कालीन अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी लहर से प्रभावित थे, विदेशी मालिकों के कारखानों में हड़ताल आयोजित कराने लगे। ईस्टर्न रेलवे और क्लाइव जूट मिलें इसका उदाहरण है।

जहाँ तक किसानों, विशेषकर निचले तबके के किसानों को आंदोलन के लिए तैयार कराने की बात है, कहा जाता है कि स्वदेशी आंदोलन इस मामाले में असफल रहा। केवल बारीसाल इसका अपवाद माना जाता है। लेकिन स्वदेशी आंदोलन ने छिटपुट जगहों पर जितने किसानों को आंदोलन के लिए तैयार किया था उनमें राजनीतिक चेतना जगाई वह अपने आप में आंदोलन की बहुत बड़ी सफलता थी क्योंकि स्वदेशी आंदोलन वास्तव में भारत में आधुनिक राजनीति की शुरूआत थी। समूचे किसान तबके को राजनीतिक संधर्ष के लिए तैयार न कर पाने की बात केवल स्वदेशी आंदोलन के साथ ही नहीं जुड़ी है। स्वदेशी आंदोलन के बाद भारत में जो भी आंदोलन हुए वे समूचे किसान तबक को प्रभावित नहीं कर सकें। इनकी गतिविधियाँ भी क्षेत्र विशेष में सिमट कर रह गई। यह सच है कि किसान आंदोलनों के लिए, किसानों की माँगों के लिए किसानों को बड़े पैमाने पर संगठित नहीं किया जा सका, और किसान राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय रूप से जुड़ नही सके। लेकिन इस तथ्य से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि स्वदेशी आंदोलन ने बैइकों, जनसभाओं, यात्राओं, प्रदर्शनों इत्यादि के माध्यम से किसानों के एक बड़े तबके को आधुनिक राजनीतिक विचारधारा से परिचित कराया।

इस प्रकार स्वदेशी आंदोलन की समाप्ति के साथ भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक युग समाप्त हो गया। यह कहना गलत होगा कि स्वदेशी आंदोलन असफल रहा। आंदोलन ने समाज के उस बड़े तबके में राष्ट्रीयता की चेतना का संचार किया जो उससे पहले राष्ट्रीयता के बारे में अनभिज्ञ था। इस आंदोलन ने औपनिवेशिक विचारधारा तथा फिरंगी हुकूमत को काफी हद तक क्षति पहुँचाई और सांस्कृतिक जीवन को जितना प्रभावित किया उसका इतिहास में मिसाल मिलना मुश्किल है।

1. सरकार, सुमित, आधुनिक भारत (1885–1947), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007
2. चन्द्र विपिन, आधुनिक भारत का इतिहास, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्रा0 लि0, नई दिल्ली, 2018
3. सरकार, सुमित, दी स्वदेशी मूवमेंट इन बंगाल : 1903–1908, पी. पी. एच. नई दिल्ली, 1973
4. वर्मा, मदन लाल, स्वाधीनता संग्राम के क्रांतिकारी साहित्य का इतिहास, प्रवीण प्रकाशन नई दिल्ली, 2006।
5. गोपाल, राम हाउ इंडिया स्ट्रगल्ड फोर फ्रीडम, बुक सेंटर, बम्बई, 1967।
6. शर्मा, एल. पी., आधुनिक भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2010–11।
7. सीतारमैया, बी. पी. : दी हिस्ट्री ऑफ दी इंडियन नेशनल कांग्रेस, खण्ड–2, पद्या पब्लिकेशन बम्बई, 1946।